श्री श्रीसाकेत-महिमा

अवध की महिमा अपरंपार, गावत हैं श्रुतिचार।
निश्चित अचल समाधिन्ह में जो, ध्याई बारम्बार।
ताते नाम अयोध्या गायो, वह ऋग्वेद प्रकार ॥ १ ॥
राजधानी परवल कञ्चनमय, आठ चक्र नव द्वार।
ताते नाम अयोध्या पावन, अस यजु करत विचार ॥२॥
अकार मकार उकार देवत्रय, ध्याई जो लखि सार।
ताते नाम अयोध्या ऐसो, साम करत निरधार ॥३॥
अग जग कोष जहां अपराजित, ब्रह्मदेव आगार।
ताते नाम अवध मनभावन, कहत अथर्व उदार ॥४॥

—काष्ठ जिह्व देवस्वामी।

श्रीसाकेत, श्रीअयोध्या, श्रीकोशला, श्रीसत्या, ये सब अवध के ही पर्यायवाचक नाम है, श्रीअयोध्या की अपरम्पार महिमा है, चारों वेदों में इसकी उदार महिमा का वर्णन पाया जाता है, शास्त्र पुराण, तथा इतिहासों में भो अन्वेषण करने से इसकी महिमा के गहन तत्त्व उपलब्ध होते हैं। जैसे भगवान् को महिमा अनन्त है वैसे ही भगवन्नाम की तथा भगवद्धाम की भी अपार महिमा है,

हमारे पूज्य वेदों के तथा महर्षियों के वचन द्वारा इस बात का यथार्थ अनुभव प्राप्त होता है। ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, तथा अथर्वण के मंत्रभाग में यह श्रुति है कि--

पादोऽस्य विश्वाभूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि।

यह समस्त संसार ब्रह्मलोक पर्यन्त एक पाद विभूति है, तथा परमात्मा का नित्य निकेतन श्रीसाकेतधाम त्रिपाद विभूति सम्पन्न है। एक महात्मा कहते रहे कि जैसे अमीर लोग अपने सजे हुए कमरे के इधर उधर खिड़कियां तथा झरोखा रखते हैं जिससे राह चलते मुसाफिरको खिड़कियों द्वारा उनके घरकी सम्पत्ति की कुछ झलक मालूम होती है, वैसे ही परमात्मा का दिव्यधाम तो महा· तेज सम्पन्न अनन्त विभूति सम्पन्न है परन्तु परमात्मा ने उसके वैभव का थोड़ा सा दिग्दर्शन कराने के वास्ते जहां तहां खिड़कियां खोल रखीं हैं उसीसे जो प्रकाश बाहर निकलता है उससे अनन्ता- नन्त ब्रह्माण्ड प्रकाशित होते रहते हैं। तथा वहां जो आनन्द के फव्वारे छूटते हैं उन्हीं के झीणे कण यहां गिरते हैं उससे सब आनन्दित रहते हैं, जैसे भीतर रोशनी जलती है उसका प्रकाश दरवाजों से कुछ बाहर भी निलता ही है वैसे परमधामके अपरि- मित तेज की कुछ किरणें दरवाजों से बाहर दिकलती हैं उन्हींको प्रत्येक ब्रह्माण्डों में सूर्य-चन्द्रादिक नाम से पुकारा जाता है, यद्यपि इस बातका प्रमाण शास्त्रों में नहीं पाया जाता है परन्तु महात्माजी का अनुभव तो परम यथार्थ तथा ग्राह्य है।

प्रभु के धाम की महिमा समझने वाले मनुष्य को क्या फल प्राप्त होता है? इसका वर्णन वेद में लिखा है कि—

पुरं यो ब्रह्मणो वेदस्याः पुरुष उच्यते ॥ २८ ॥
यो वै तां ब्रह्मणो वेदामृतेनामृतां पुरम्।
तस्मै ब्रह्म च ब्राह्माच चक्षुः प्राणं प्रजां ददुः ॥ २९ ॥
न वै तं चक्षुर्जहाति न प्राणो जरसः पुरा।
पुरं यो ब्रह्मणो वेद यस्याः पुरुष उच्यते ॥ ३० ॥
अष्ट चक्रा नव द्वारा देवानापूरयोध्या।
तस्यां हिरण्यमयः कोशः स्वर्गो ज्योतिषावृतः ॥ ३१ ॥
तस्मिन् हिरण्यये कोशे त्र्यरे त्रिप्रतिष्ठिते।
तस्मिन् यद्यक्षमात्मवन्वतद्वै ब्रह्मविदो विदुः ॥ ३२ ॥
प्रभ्राजमानां हरिणीं यशसा सम्परीवृताम्।
पुरं हिरण्ययीं ब्रह्मा विवेशापराजिताम् ॥ ३३ ॥

अथर्व० १० काण्ड प्रथम अनुवाक् सूत्र २ मं० २८ सें।

'जो कोई ब्रह्म की (श्रीरामजी की) पुरीको जानता है उसे प्रभु श्रीराम और भगवान् श्रीराम के दिव्य पार्षद चक्षु, प्राण, और प्रजा देते हैं, यदि कहो कि किस पुरीको जानने के लिये कहते हो? इसका उत्तर यह है कि—"यस्याः पुरुष उच्यते" जिसका पुरुष कहा जाता है अर्थात् जिसका प्रतिदिन नाम स्मरण किया जाता है उस पुरुष की पुरी को जानने के लिये भगवती श्रुति आदेश देती है। जो कोई अनन्त

शक्ति सम्पन्न सर्व जगदाधार प्रभु श्रीराम जी की अमृत अर्थात् मोक्ष सुख से आवृत परिपूर्ण श्रीअयोध्यापुरी को जानता है उसके लिये परब्रह्म परमात्मा प्रभु श्रीराम तथा ब्राह्मा अर्थात् प्रभुके नित्य मुक्त दिव्य पार्षद हनुमदादिक परिकर उत्तम दर्शन शक्ति, उत्तम प्राणन शक्ति, अर्थात् आयुष्य बल, आरोग्य सन्तानादिक देते हैं। जिस पुरीका पुरुष कहा जाता है। भगवान् श्रीरामकी पुरीको जो अच्छी तरह जानता है उस प्राणी को बाह्याभ्यान्तर दर्शन शक्ति, शारीरिक और अध्यात्मिक बल मृत्यु से पूर्व कभी भी नहीं छोड़ते हैं अर्थात् वह अनन्त शक्ति सम्पन्न हो जाता है।

वह श्री अयोध्या जी है। जो आठ चक्रों अर्थात् आवरणों से परिवेष्ठित है। जिसमें प्रधान नवद्वार हैं, जो दिव्य गुण सम्पन्न प्रपत्तिनिष्ठ भगवत्प्रिय भागवतों से परि सेवित है, उस अयोध्या पुरी में एक बहुत ही ऊंचा परम सुन्दर स्वतः प्रकाशित महातेज पुञ्ज युक्त सुवर्ण मय परम विशाल महा मण्डप है। उस सुवर्ण मय महा मण्डप में उसके अर्थात् मण्डप के आत्मा के समान जो पूजनीय देव विराजमान हैं; उन्हीं को ब्रह्मवेत्ता जानते हैं तथा ध्यान धरते हैं। जिस मण्डप में वह विराजमान हैं वह मण्डप तीन अरों पर प्रतिष्ठित है अर्थात् वह कोश तीन अरों से विरचित है और तीनों लोकों में सुप्रतिष्ठित है।

सर्वान्तर्यामी ब्रह्म श्रीराम जी उसी अवधपुरी में प्रविष्ट हैं, विराजमान हैं। यह पुरी कैसी है? अत्यन्त दिव्य तथा सुखमय

प्रकाशमयी है, मनको हरण करने वाली है पापों को विध्वंस करने वाली है, अनन्त कीर्ति से युक्त है, समस्त पुरियों से श्रेष्ठ है अर्थात् अतुलनीय एवं अप्रतिम है।

इन मन्त्रों में स्पष्ट कहा गया है कि श्रीअयोध्यापुरीके मध्य सुवर्ण मण्डप में जो देव विराजमान हैं वही परात्परतम पूर्ण ब्रह्म हैं। विद्वान लोग उन्हीं का जानते हैं और उन्हीं को प्राप्त करने का सतत महा प्रयास करते हैं। श्रीअयोध्या साकेत धाम के दिव्य हिरण्य मय महा मण्डप के मध्य भाग में प्रभु श्रीसीता राम जी ही विराजमान हैं अतः यह परिशेषात् सिद्ध होता है कि प्रभु श्री सीताराम जी ही पूर्ण परतम ब्रह्म हैं।

इस प्रकार श्रुतियां दिव्य अवध श्रीसाकेत धामकी महिमाका मुक्त कण्ठ से गान करती हैं। जैसा सविस्तर तथा प्रभावशाली सुन्दर स्पष्ट वर्णन श्रीअयोध्या धाम का श्रुतियों में पाया जाता है वैसा उदार वर्णन मेरे ख्याल से अन्य किसी भी पुरी का शायद ही हो, ये श्रुतियां तो इतनी स्पष्ट हैं कि व्याख्याताओं को तोड़-मोड़ करने की जरूरत ही नहीं पड़ती तथा स्पष्ट अर्थ झलक आता है।

सामवेद की तैतरीय श्रुति भी कहती है—

"देवानां पूरयोध्या तस्यां हिरण्यमयः कोशः स्वर्गो लोको ज्योतिषावृत्तो यो वै तां ब्रह्मणो वेदामृतेनावृत्तां पुरीं तस्मै बृह्म च ब्राह्माच आयुः कीर्ति प्रजां ददुः"

"देवों की अर्थात् प्रभुप्रिय प्रपन्नों की, महा भागवतों की, श्री वैष्णवों की पुरी अयोध्या श्रीसाकेत है, उसमें हिरण्यमय एक कोश है, समस्त स्वर्गलोक उसकी ज्योति प्रभासे आच्छादित है जो अमृताच्छादित आनन्द मयी श्रीअयोध्या जी को (श्रीसाकेत को) अच्छी तरह जानता है तथा प्राप्त करने का प्रयास करता है उसको परब्रह्म श्रीरामजी तथा ब्राह्मा भगवत्पार्षदादिक प्रभुप्रिय समस्त देवता, आयु, कीर्ति, तथा प्रजासुख प्रदान करते हैं"।

अथर्ववेद उत्तरार्द्ध में भी—

"यायोध्या सा सर्व वैकुण्ठानामेव मूलाधारा प्रकृतेः परा तत्सद्ब्रह्ममयी, विरजोत्तरा दिव्य रत्न कोशाढ्या तस्यामेव श्रीसीतारामयोर्विहार स्थलमस्ति"

जो अयोध्यापुरी है वह समस्त वैकुण्ठोंको मूलाधार है अर्थात् "वैकुण्ठं पञ्च विख्यातं क्षीराब्धि च रमाव्ययम् । कारणं महा वैकुण्ठं पञ्चमं विरजां परम्" इसमें जो वैकुण्ठों के नाम हैं उनमें विरजापार जो पर वैकुण्ठ श्रीसाकेत धाम है वही समस्त वैकुण्ठों का मूलाधार है, प्रकृति से पर है, विरजा नदी से उत्तर है, दिव्य रत्न कोश सम्पन्न है, हिरण्यमय है, यही भगवान् श्रीसीतारामजी महाराज का नित्य धाम है, विहार स्थल है, वेद इसीको परमधाम (श्री साकेत धाम) कहता है ।

भार्गव पुराण में भी लिखा है—

त्रिपाद विभूति वैकुण्ठे विरजायाः परे तटे ।
या देवानां पूरयोध्या ह्यमृतेनावृता पुरी ॥

जो पर वैकुण्ठ है, त्रिपाद विभूति सम्पन्न है, श्रीविरजा नदी के उसपार है, दिव्य भगवत्पार्षदोंका निवास स्थल है, अमृत से आच्छादित परिपूर्ण है, वही परम महिमा मयी पुरी श्रीअयोध्या है श्री साकेत धाम है।

अयोध्या नगरी नित्या सच्चिदानन्द रूपिणी ।
यस्यांशेन हि वैकुण्ठा गोलोकादि प्रतिष्ठितम् ॥
पूर्णः पूर्णतमः श्रीमान् सच्चिदानन्द विग्रहः ।
अयोध्यां क्वापि सन्त्यज्य पादमेकं न गच्छति ॥

—वशिष्ट संहिता।

"सच्चिदानन्द स्वरूपिणी श्रीअयोध्या नगरी नित्य है। जिसके अशांश से वैकुण्ठ तथा गोलोकादिक प्रतिष्ठित हैं, पूर्ण पूर्णतम, सच्चिदानन्द विग्रह श्रीमान् रामचन्द्रजी श्रीअयोध्यापुरी को छोड़ कर अन्यत्र कहीं एक पैर भी नहीं जाते हैं"

पुरातनमिदं स्थानमस्माकं तु तदेव हि।
कोशलाख्यं पुरं दिव्यं प्रलयेऽनंक्ष्यति प्रभो ॥
अविनश्वरमेवैकमयोध्या पुरमद्भुतम् ।
तत्रैव रमसे नाथ ! आनन्द रस प्लावितः ॥

—शुक संहिता।

श्रीसीता जी भगवान् श्रीराम जी से कहती हैं कि हे नाथ ! हम लोगों का यह पुरातन निवास स्थल है, यह कोशला नामक

पुरी का प्रलय में भी नाश नहीं होता है, यह पुर तो अविनाशी है, ऐसा अद्भुत पुर केवल एक अयोध्या ही है, हे नाथ ! आप वहीं पर आनन्द रस मग्न होकर सर्वदा रमण करते हैं।

अवतारैरसंख्यातैः प्रधानैर्दशभिस्तथा ।
वेदैः साङ्गोपनिषदै यंज्ञैर्बहुविधैरपि ॥
सेव्यमाने परे रम्ये गुणावासे परं पदे ।

--सदाशिव संहिता।

असंख्य भगवदवतारों से, तथा प्रधान दश अवतारों से समस्त वेदों से, उपनिषदों से, साङ्ग समस्त वेद शास्त्रों से, बहुत तरह के यज्ञादिकों से, सेव्यमान परमरम्य गुण सागर परम पद में श्री साकेत धाम में भगवान् श्री सीताराम जी का नित्य निवास होता है।

त्रिपाद विभूतिर्नित्या स्यादनित्या पादमैश्वरम् ।
त्रिपाद व्याप्तिः परे धाम्नि पादोस्येहा भवत्पुनः ॥

—पद्म खं० ६-अ० २२७, श्लो० १५।

"नित्य तो त्रिपाद विभूति श्री साकेतधाम का ऐश्वर्य है, एक पाद विभूति का ऐश्वर्य तो अनित्य है, त्रिपाद विभूति को व्याप्ति वर्तमानता परधाम श्री साकेत में ही है यहाँ पर तो केवल एक पाद विभूति ही वर्तमान है।

न यत्र सत्त्वं न रजः तमश्च न,
न वै विकारो न महान् प्रधानम् ।
परं पदं वैष्णवमामनन्ति,

—भा० स्कं० २ अ० २ श्लोक १७ ।

"न जिस जगह सत्व है न रज है तथा न तम, न विकार है न महत्त्व तथा न माया, वह त्रिगुणातीत अविकारी अलौकिक परमधाम है, श्री वैष्णवधाम वही कहलाता है, भागवतों का वहीं पर निवास होता है।"

अथर्वण पूर्वकाण्ड——

तमसस्तु परं ज्योतिः परमानन्द लक्षणम् ।
पाद त्रयात्मकं ब्रह्म कैवल्यं शाश्वतं परम् ॥

अथर्वण उत्तरकाण्ड——

"त्रिपाद विभूति वैकुण्ठस्थानं तदेव परमसाकेत महाकैवल्यं"

"जो तम से परे है, परम ज्योति स्वरूप है, आनन्दमय है, नित्यशाश्वत है, पादत्रयात्मक है, कैवल्यधाम है, पर है, वही ब्रह्म का सनातन साकेतलोक है, त्रिपाद विभूति सम्पन्न जो दिव्य-लोक है वही, वैकुण्ठ, महाकैवल्य, तथा श्री साकेतधाम कहलाता है।"

एकांशेन जगत्सर्वं सृजत्यवति लीयति ।
त्रिपाद तस्य देवस्य ह्यमृतं तत्वदर्शिनः ॥

——लोमश संहिता ।

जो भगवान् अपने एक ही अंश से जगत् की उत्पत्ति पालन तथा प्रलय करता है उसी परम समर्थ सर्वशक्तिमय देव का (प्रभु श्रीराम का) नित्य धाम अमृत स्वरूप है तत्त्व द्रष्टा महात्मागण तथा विद्वान् योगी उसको जानते हैं।

इस प्रकार भगवान् के नित्य धाम की महिमा शास्त्रों में अगणित स्थानों पर पायी जाती है, गोस्वामी तुलसीदासजी ने तो श्रीमुख से ही कहलाया है कि—"यद्यपि सब वैकुण्ठ बखाना। अवध सरिस मोहिं प्रिय नहिं सोई। यह प्रसङ्ग जानत कोइ कोई॥" इत्यादि, इस अवध धाम की महिमा का वर्णन करना कोई सहज काम नहीं है, मनुष्य जब तक उस नित्य धाम को प्राप्त नहीं कर लेता है तब तक आवागमन का चक्कर छूट ही नहीं सकता। इसलिये उस धाम के प्राप्त्यर्थ प्रयत्नशील होना चाहिये, उसको प्राप्त करने के बाद संसार में लौटकर नहीं आना पड़ेगा।

यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम। गीता।

जिसको प्राप्त करके वापस नहीं लौटना पड़ता है वही मेरा नित्य निकेतन है, जगद्गुरु श्री रामानन्दाचार्यजी महाराज ने भी श्री वैष्णवमताब्जभास्कर में लिखा है कि—

शीतान्त सिन्ध्वाप्लुत एव धन्यो गत्वा परब्रह्म सुविक्षितोऽथ प्राप्यं महानन्द महाब्धिमग्नो नावर्तते जातु पुनः ततः सः॥
परं पदं सैवमुपेत्य नित्यममानवो ब्रह्मपथेन तेन सायुज्यमेव प्रतिलभ्य तत्र प्राप्यस्य सन्नन्दति तेन साकम्॥

"प्रभु धाम को प्राप्त जीव भगवान् श्रीराम को प्राप्त कर

संसार तापहारक अत्यन्त शीतल प्रभु के कृपामृत महासागर में अवगाहन कर आनन्द के अगाध निधि में निमग्न हो जाता है तथा सर्वदा प्रभु सेवा के अवर्णनीय आनन्द रस का मधुर आस्वादन करता है, पुनः वह जीव उस श्री साकेतधाम को छोड़कर कभी मर्त्यभूमि पर नहीं आता है, सर्व देवों से पूजित होकर वह अमानव-अर्थात् दिव्य शरीर युक्त हो अर्चिरादि ब्रह्ममार्ग से भगवान् के सनातन सर्वोत्कृष्ट साकेतलोक को प्राप्त करके भगवान् के साथ सदा ही नित्य लीला केलि का आनन्द लूटता है,फिर उसको मर्त्यलोक आने में का न तो मन ही होता है तथा न आना हो पड़ता है।

प्रभु के नित्यधाम का जो कुछ महत्त्व लिखा जाय थोड़ा ही है उसका वास्तविक वर्णन तो शेष शारदा से भी नहीं ही हो सकता, एक साधारण अमीर भी अपना घर कैसा सजाता है? एकाध देश का बादशाह अपना बङ्गला कैसा बनाता है? तब अखिल ब्रह्माण्डनायक, इन्द्र, वरुण, दिग्पाल, ब्रह्मा, विष्णु, महेशादिक देवताओं के, नर, नाग, दानवों के, सचराचर के, मालिक सर्वेश्वर प्रभु के धाम की कैसी शोभा होगी? उसका तो ख्याल करो! बस, अनुभव करने से खुद ही ज्ञात हो जायगा, प्रभु नाम स्मरण, शास्त्र श्रवण, तथा सतसङ्ग द्वारा उस धाम की महिमा का ज्ञान प्राप्त कर सकोगे अतः उसके लिये उपाय करो, प्रभु को प्राप्त करलो, तथा लूटो उस दिव्य धाम का दिव्य आनन्द! सुखसागर में मग्न हो जाओ।

❀ श्री साकेत सप्तावरण ❀

(दोहा)

श्री सीतावर चरण शुभ, प्रणवौं बारम्बार ।
श्री सियपद हरदम सदा, ध्यावौं अति हितकार ॥ १ ॥
विनवौं श्री आचार्य्य वर, जग गुरु रामानन्द ।
श्रीगुरु चरण सरोज रज, प्रणवौं पुनि सानन्द ॥ २ ॥
भरद्वाज मुनिवर परम, अरु वशिष्ठ सम्बाद ।
वरणौं भाषा छन्द में, दायक अति अल्हाद ॥ ३ ॥
भरद्वाज ऋषिवर्य्य ने, एकबार शिर नाय ।
श्री वशिष्ठ से प्रश्न यह, पूछा था हरषाय ॥ ४ ॥

हे चतुरानन सुत सुजान! तुम, सकल वेद के ज्ञाता हो।
धर्मशास्त्र, इतिहासादिक के, विमल तत्त्व व्याख्याता हो॥
जो मर्म धर्म का परम गहन, जिस तरह जानते आप प्रभो?
उस तरह जानता कोई नहीं, अतएव पूछता आज प्रभो??
"जो सकल लोक का कारण है, वह श्रीहरि का निज धाम कहाँ?
परिकर सहित सदा करुणाकर, बसते हैं आराम जहाँ?
माधुर्य्य और ऐश्वर्य्य नित्य, बतलाते हैं भरपूर जहाँ?
सच्चित्-आनन्द सदा एकरस, रहता है परिपूर जहाँ?"
बतला दीजे कृपया भगवन्! मुझको अब उसका ठीक पता।
आतुर हूँ, परमातुर हूँ दीजे अब तो वह धाम बता॥

भरद्वाज के वचन सुन, श्री वशिष्ठ महाराज।
बोले अति आनन्द सह, वचन तासु हित काज ॥ ५ ॥

"हे भरद्वाज ! पूछा तुमने है, गुप्त तत्त्व मुझसे यह आज।
वेद शास्त्र सिद्धान्त सार मैं, बतलाता हूँ तुमसे आज॥
सुनलो सावधान होकर, है यह रहस्य दुर्लभ सबको।
हे अनघ ! राम के भक्त बिना, यह नहीं सुनाना तुम सबको॥"
है सर्व लोक से अति ऊँचा, माया मण्डल से पार ललाम।
विरजा के उस तट पर शोभित, श्री वैकुण्ठ दिव्य हरि धाम॥
मन वचन अगोचर सुखकर है, उसके ऊपर में श्री गो लोक।
उसके मध्य भाग में सुन्दर, राम धाम है हरण शोक॥

श्री वृन्दावन आदि सब, राजत परम ललाम।
सप्तावरणों में सकल, अवतारन्ह के धाम ॥ ६ ॥
यह केवल ऐश्वर्यमय, परमेश्वर का धाम।
ध्याते पाते भक्त जन, रहते पूरण काम ॥ ७ ॥

इससे परतम धाम राम का, भारत में एक सनातन है।
अति दुर्लभ देवों को, जिसका-अवध नाम पुरातन है॥
अद्भुत तथा अखण्ड एकरस, रहता सच्चित्-आनन्दमय।
मन वचन इन्द्रियातीत अलौकिक, लगता है सब दिन सुखमय॥
भूतल पर रहते भी उसको, मायाकृत गुण दोष अपार।
स्पर्श नहीं कर पाते हैं, जैसे पङ्कज को जल की धार॥
काल कर्म मायिक प्रपञ्च, षड्-ऊर्मि और अनेक विकार।
उद्भव नहि होने पाते हैं, उसमें कभी महा दुखकार॥

पर्वत पापों के फट जाते, दरशन उसके करते-करते ।
वह मुक्त तुरत हो जाता जो, करता दरशन मरते-मरते ॥
जिसके है आधीन में, उसका है यह धाम ।
अतः यहाँ माया नहीं, कर सकती कुछ काम ॥ ८ ॥
जिनके तेज प्रचण्ड से, प्रमुदित हैं सब धाम ।
मालिक इसके हैं वही, मायापति भगवान ॥ ९ ॥
पश्चिम, उत्तर तथा पूर्व में, सरयू शोभा देती है ।
करती है कल-कल निनाद, सबका ही मन हर लेती है ॥
विरजादिक जिसके अंशों से, नदियाँ पावन कहलातीं ।
वे सरयू की ललित लहरियाँ, हरदम ही हैं लहरातीं ॥
श्रीमन्नारायण विष्णु से, परतम कृष्णादिक से भी जो ।
दाशरथी श्री राम परात्पर, कहलाते सुखधाम भी जो ॥
जिनकी अंश कला से प्रकटित, होते अगणित हैं अवतार ।
हरि हर ब्रह्मादिक लाखों ही, नियमित रखते हैं संसार ॥
बस, वही विभूति द्वयनायक, सच्चित्-आनन्दमय भगवान ।
अनन्त अद्भुत वात्सल्यादिक, शुचि गुणगण वारिधि श्रीराम ॥
दयाशील सौन्दर्य्य सुख, सागर परम उदार ।
परम ब्रह्म परात्पर, रघुवंशी सरदार ॥ १० ॥
सब दिन रहते अवध में, भक्तवछल भगवान् ।
ध्याते जिनको योगि जन, गाते गुण विद्वान् ॥ ११ ॥
वात्सल्यामृत पूर्ण पिता, श्री दशरथ यहाँ विराजित हैं ।
अम्बा श्री कौशल्यादिक भी, सभी वहाँ पर राजित हैं ॥

श्री सीताजी सहित अनेकों, दासी-अली सखी गण भी।
रूप-गुण-वय सम हैं जिनको, ऐसे सौम्य-सखा गण भी॥
परिवार प्रभू का अति अनन्त हैं, सब ही सच्चित आनन्द-मय।
दिव्य-अलौकिक-नित्य एक रस, प्रभु के परिकर हैं सुखमय॥
विविध भोग ऐश्वर्य युक्त प्रभु, बसते सदा यहीं पर ही।
छोड़ अवध सुखधाम न जाते, क्षणभर राम कहीं पर भी॥
यह मधुर भाव से पूर्ण धाम है यद्यपि वैभव सागर है।
अति प्रिय प्रभुको यही धाम है, सब को परम सुखाकर है॥
प्रभु भक्ति रस-रसिक जनों को, इसका दरशन मिलता है।
महिमा अमित देख-देख कर, प्रमुदित हृदय उछलता है॥

प्राकृत आँखों से नहीं, दिखलाता यह धाम।
वही देख पाता इसे, जिसे दिखाते राम॥ १२॥
तीन देह से रहित जो, राम भक्त निष्काम।
सच्चित्-आनन्द मय पुरी, देखत वही ललाम॥ १३॥
अब मैं प्रकृति पार जो, दिव्य लोक साकेत।
करता हूँ उसका सुखद, वर्णन प्रेम समेत॥ १४॥
जिसके वैभव अंश से, वैकुण्ठादिक धाम।
होते प्रकट सदा वही, प्रभु का लोक ललाम॥ १५॥

हैं सात आवरण उसके मुनिवर! भरद्वाज! अब श्रवण करो।
हो सावधान उस सर्वेश्वर का, एक बार फिर ध्यान धरो॥
मन-बुद्धि-इन्द्रियाँ शान्त करो! तब सुनो द्विजेन्द्र! महामतिमान।
सच्चित् परमानन्द-नित्य, जैसा है प्रभुका धाम ललाम॥

योजन एक-एक अवध का, ब्राह्म प्रदेश सुहावन है ।
गोलोक उसीको कहते हैं, वह परम दिव्य मन भावन है ॥
ब्रह्मा-शङ्कर-इन्द्र आदि सब, महा-महा* कहलाते हैं ।
यम-वरुण कुबेर सभी दिग्पालक, वहाँ महान् सुहाते हैं ॥
तेतिस कोटि देवता रहते, विद्याधर गन्धर्व वहीं ।
अप्सर गण-नारद-सनकादिक, रहते ऋषिवर सप्त वहीं ॥
मूर्तिमान् सब वेद-शास्त्र गण, विद्या विविध विशाल प्रकार ।
सायुध-सगण सभी रहते हैं, राम भक्ति रस रसिक उदार ॥
इन्हीं सभी के अंश-कला से, होते हैं सब देव प्रधान ।
ब्रह्मा-शङ्कर-इन्द्र आदि सब, सनकादिक सप्तर्षि सुजान ॥

प्रथम आवरण में सुखद, ये सब रहते देव ।
भूरि भाग्य इनके अमित, करते सियवर सेव ॥ १६ ॥

अष्ट सिद्धि नव निधि सुहावन, नित्य रूप धारी सुख खान ।
प्रभु की सेवा में रहती है, समझ-समझ कर भाग्य महान ॥
पृथक्-पृथक् पाँचों प्रकार की, रूपवती मुक्ति रहतीं ।
कर्म-ज्ञान, वैराग्य सहित, परमानन्द सभी लहतीं ॥
सार्ष्टि और सायुज्य तथा, सालोक्य तीन कहलातीं हैं ।
सारूप्य और सामीप्य यही तो, पाँच मुक्ति कहलाती हैं ॥
इनमें से किसी एक को पाकर, होता जीव मुक्त मतिमान ।
नित्य-दिव्य अमृत रस पाकर, बन जाता खुद ब्रह्म समान ॥

---

* अर्थात् !-महाब्रह्मा महारुद्र, महेन्द्र, तथा दिग्पाल आदि ।

साकेत धाम के पूर्व भाग में, मिथिलापुरी सुहाई है।
सच्चित्-आनन्द रूप नित्य वह, भक्तों को सुखदाई है॥
ऊँचे-ऊँचे, रत्न जटित हैं सबके सुन्दर सदन सभी।
गुण सम्पन्न सभी नरनारी, लगते हैं मनहरण सभी॥
विविध चित्र-शुभ ध्वजा-पताका, तोरण उच्च विमान वहां।
घर ऊपर दिखलाते सुन्दर, स्वर्ण कलश, मणि जटित महा॥
दुर्ग बना अतिदृढ़ विशाल, उस पुर के चारों तरफ अहो।
खाई है गहरी जल पूरित, जलचर सङ्कुल हैं खूब अहो॥
बस इसी, श्रीमती मिथिला में रहते शीरध्वज महाराजा।
भगवान् राम के श्वसुर जनक, वात्सल्य गुणोदधि निमिराजा॥

निमीवंश नर केशरी, महाबीर रणधीर।
सर्व शास्त्र तत्वज्ञ नृप, अगणित गुण गम्भीर॥ २०॥

धनुर्वेद विशारदों में ये, सर्व श्रेष्ट पद पाते हैं।
श्रुति सिद्धान्त सार ज्ञाता ये, योगी वर कहलाते हैं॥
सर्व विभव ऐश्वर्य पूर्ण निज चतुरङ्गी है सैन्य अपार।
दासी-दास-बन्धु-बान्धव सहित रहते मिथिलापुरी मँझार॥
योगी आकर योग सीखते, प्रतिदिन लाखों इनके पास।
करते ये सन्तुष्ट सभी को, सिखला योग क्रिया सुखरास॥
ये भोगी हैं, ये ज्ञानी हैं, ये हैं योगीजन के सरदार।
सब प्रकार से पूर्ण सदा, इनकी है महिमा अपरम्पार॥
दिव्य अवध के पूर्व भाग में, रहते प्रभु प्रिय ये महाराज।
भगवत्प्रेम सुधारस छाके, करते भोग सकल सुखसाज॥

दक्षिण दिशि में है महा, चित्रकूट गिरिराज।
सच्चित-आनन्दमय अमित, तेजोमय सुखसाज॥ २१॥

नाना रत्न खान हैं उसमें, शिखर विचित्र विशाल महान।
विविध भाँति के वृक्ष मनोरम, पुष्पलता आनन्द-निधान॥
सुन्दर-सुधा स्वाद-पूर्ण फल, मोठे मीठे मन भावन।
सुखदायक हैं परम रसीले, शुभ सौरभमय अति पावन॥
महँ-महँ महक रही फूलों की गन्ध सुहावन प्रति बन में।
लता वितान तने अति सुन्दर, आनन्द वर्द्धक तन-मन में॥
भौंरा गुञ्ज रहे मीठे स्वर, कोकिल कुहुक मचाती है।
मतवाले बन मोर नाचते, शोभा हृदय लुभाती है॥

वहतीं कल-कल नादिनी, श्रीमन्दाकिनि गङ्ग।
प्रभु को परमानन्द प्रद, लहरें ललित तरङ्ग॥ २२॥

कञ्चनमय चिद्रूप भूमिका, कामद गिरि की दिखलाती।
मण्डित दिव्य वनों से चोटी, पर्वत की यह बतलाती॥
देखो! देखो! प्रभु की रचना, यह स्रोत सुधा का बहता है।
हरदम देखें इस शोभा को, यह हृदय सभी का कहता है॥
श्रीमन्दाकिनि की धारा, देखो तो निर्मल कैसी है?
दी जावे किसकी उपमा जग में, कोई भी नहिं ऐसी है॥
इसकी मुक्ता मणि मय बालू, चम-चम-चमका करती है।
पंक्तियाँ तटों के वृक्षों की तो, वरवश मन को हरती है॥
नाना प्रकार के कमल खिले, भौंरा करें उस पर गुञ्जार।
पक्षी कुहुँ-कुहुँ कुहुक मचाये, आनन्द आता अपरम्पार॥

स्वर्ण स्फटिक मणि मुक्तादिक से बँधे घाट हैं परम विशाल।
चित्रित उनमें लता पुष्प हैं, देखत लागत परम रसाल॥
बने कुञ्ज हैं विविध तरह के तट पर अतिशय शोभा खान।
करते नित्य विहार मोद सह, परिकर युत श्रीसिय श्रीराम॥

पश्चिम दिशि श्री अवध के, है वृन्दावन धाम।
चिदानन्द मय-नित्य-शुचि, दायक अति अभिराम॥ २३॥

भगवान कृष्ण का धाम नित्य, यह आनन्द अधिक बढ़ाता है।
कञ्चन रत्न मयी भूमी से, युक्त सदा दिखलाता है॥
दिव्य वृक्ष नवलता कुञ्ज में, गुञ्जत भँवर परम सुखकार।
नव पल्लव फल फूल युक्त हैं, वृक्षलता सब सुखमा सार॥
पक्षी मधुर शोर मचाते, मोर नाचते विविधि प्रकार।
गोवर्धन गिरिराज यहाँ पर शोभा देता अपरम्पार॥
श्री कृष्ण वल्लभा कालिन्दी भी, पुण्य तोय मय बहती है।
करती कल-कल नाद सुहावन, लहरें श्याम लहरती है॥

जैसे प्रभु के अङ्ग का श्याम रङ्ग सुखकार।
श्री यमुना जल श्यामता, वैसो ही मन सार॥ २४॥

स्वर्ण रचित हैं घाट मनोहर, रत्न बालुका परम रसाल।
गो-गोपी अरु गोप वृन्द से, सेवित होते हैं नन्दलाल॥
श्रीमन्नन्द-यशोदा हलधर, और अनेकों हैं गोपाल।
गोप कन्यका श्रीराधा जो, सखी अनेकों सहित समाज॥
रहते श्री लीला पुरुषोत्तम, कृष्ण वहीं पर शोभा खान।
वंशीधर ब्रज विपिन बिहारी, सुख दायक सब दिन भगवान॥

श्री राधा मुख कमल भृङ्ग बन, पीते शुचि मकरन्द सुजान ।
करते क्रीडा रास रसिक, मन भावन प्रति दिन मोद निधान ॥

उत्तर में साकेत के, है वैकुण्ठ हरिधाम ।
जहाँ विष्णु वसते सदा, दायक जन विश्राम ॥ २१ ॥

सब तरफ युक्त है भूमि सुहावन, स्वर्ण रत्न मय तेज मयो ।
कुण्ड-तलाव सरोवर-शोभित, वापी निर्मल वारि मयो ॥
श्री विरजा जो नदी यहाँ पर, शोभा अधिक बढ़ाती हैं ।
शीतल ललित लहरियाँ उसकी, बरवश चित्त चुराती हैं ॥
वज्र स्फटिक मणिमय बालू है, रत्न जड़ित तीर्थों के घाट ।
कोकिल भृङ्ग मयूर आदि खग गण का मचा खूब है ठाट ॥
बन उपवन नव बाग-बगीचे, पुष्पित सब दिन रहते हैं ।
कलरव पक्षी गण का सुन कर, सभी मस्त हो रहते हैं ॥
प्रभु पार्षद में परम श्रेष्ठ हैं, उनके भवन महान् विशाल ।
लख-लख होते दङ्ग देवता, सुन्दर हेमलता के जाल ॥

ध्वज पताक तोरण बने, मणिमय परम रसाल ।
विविधि चित्र सों युक्त गृह, सहित विमान विशाल ॥

ललना ललित यहाँ पर इसकी, शोभा खूब बढ़ाती हैं ।
महा विष्णु की पुरी सुहावन, सबका हृदय लुभाती हैं ॥
इस पुर के मध्य भाग में पावन बना एक है भवन ललाम ।
लाखों स्वर्ण कलश से मण्डित, ध्वज पताक युत शोभाखान ॥
मुक्ता दाम वितान मनोहर, महा वज्र से रचित कपाट ।
हजारों मणि स्तम्भ वहाँ पर, सुख कर सभी मचा है ठाठ ॥

रत्न जडित आङ्गन में चित्रित, वेली बूटा विविध प्रकार।
चित्र अनोखे रङ्ग विरङ्गी, बहुरङ्गी हैं कमल अपार॥
है उसके मध्य भाग में सुन्दर, शय्या शेष परम सुखकार।
नित्य सत्त्व सम्पन्न सुकोमल, यह है हरि का शयनागार॥

श्री मन्नारायण यहीं, सकल गुणों के खान।
वय किशोर सब दिन करत, शयन परम सुख धाम॥ २६॥

मेघ श्याम वर्ण चतुर्भुज, दिव्य पिताम्बर पहिरे हैं।
गोल कपोल श्याम स्निग्ध, शुचि वदन सरोज सुखाकर है॥
महा रत्न मणि रचित मनोहर, कुण्डल मुकुट सुहावन हैं।
कङ्कण केयूर वन माला, श्री वत्स अधिक ललचावन हैं॥
वैजयन्ती-उपवीत-मुद्रिका, पहने हार अमूल्य उदार।
भूषण अङ्ग-अङ्ग नव राजित, देते आनन्द अपरम्पार॥
शङ्ख-चक्र-शुभ गदा-पद्म, आदिक आयुध धारी सुखधाम।
श्री-भू-लीला शक्ति सहित, परिकर दिव्य सहित भगवान्॥
विश्वक्सेनादिक पार्षद सब, नित्य मुक्त हैं सुन्दर श्याम।
चतुर्भुजा युत शुद्ध सत्व मय, पीताम्बर धारी अभिराम॥

कमल नयन सुन्दर परम, प्रभु के परिकर सर्व।
रूप गुण वय शील सम, प्रभु के ही हैं सर्व॥ २७॥

मिथिला चित्रकूट शुभ, श्री वृन्दावन धाम।
महा वैकुण्ठ यह चारि हैं, चारों तरफ ललाम॥ २८॥

ये पञ्चम आवरण में, शोभा देत अपार।
अवध धाम सेवत सदा, सबही विविधि प्रकार॥ २९॥

श्री साकेत धाम के चहुँदिशि, चौविश योजन है विस्तार।
माया गुण वर्जित सच्चिन्मय, विपिन प्रमोद सदा सुखकार॥
प्रभु का लीला स्थल पावन यह, प्रभु का अतिशय प्यारा है।
सब प्रकार रुचिकर यह वन है, सब जग का उजियारा है॥
जाम्बूनद मय पृथ्वी सुन्दर, शोभा मय चित हारी है।
सुख वर्द्धक चिद्रूप तेज मय, दुःख शोक भय हारी है॥
चन्द्रमणि अरु स्फटिक मणिमय, पत्थर बने सुहावन है।
इन्द्र नील मणि पद्मराज से, रचित उपल मन भावन है॥
मणि माणिक मुक्ता प्रवाल से, चित्र बने पाषाणों में।
श्वेत पीत अरु हरित रङ्ग सब, बने उन्हीं पाषाणों में॥
वसुधा है रमणीय परम, शोभा नहि वर्णन हो सकती।
वह बाग अलौकिक प्रभु का है, उपमा लौकिक नहि हो सकती॥

आते प्रति दिन राम सिय, परिकर सहित अपार।
करते क्रीडा सुखद अति, रघुवंशी सरदार॥ ३०॥

हे भरद्वाज ? उस वन के चारों तरफ शैल हैं चार महान्।
उनके नाम सुनाता हूँ, तुम श्रवण करो देकर अब ध्यान॥
श्रृङ्गाराद्रि शुभ रत्नाद्रि अरु लीलाद्रि है शोभा धाम।
चौथा मुक्ताद्रि मनहारी, तेजो मय आनन्द निधान॥
पूर्व दिशा में परम प्रकाशित, रवि सम सुन्दर शैल महान।
आह्लादिनी शक्ति से संयुत, श्रृङ्गाराद्रि शोभा खान॥
श्रीमद्रत्नागिरि दक्षिण में, पीत रत्न मय मनहारी।
भू देवी सह शोभा देता, भक्तजनों को सुखकारी॥

लीलाद्रि लीला देवी से, लालित लाल रत्न भरपूर।
राम प्रीति वर्धक सुखदा क पश्चिम में है आनन्द पूर॥
उत्तर में उज्वल रत्नों से संयुत मुक्ताद्रि मोद निधान।
श्रीदेवी का रमण स्थान यह, चन्द्रकान्त मणि मय सुखधाम॥

चारों दिशि में चारि ये, शैल सकल सुख साज।
वन प्रमाद की सुभगता, रखते भारद्वाज॥ ३१॥

विविध सुमन की लता सुहाई, नव पल्लव मय पुष्पित है।
वृक्ष सभी फल फूल पूर्ण ही, रहते सब दिन सुस्मित हैं॥
फल मीठे ऐसे होते को, उनके रस को चाखे जो।
"छि: अमृत तो फीका है, इनके सन्मुख" वह भाखैगो॥
मधुकर मतवाले गुञ्ज रहे हैं, कोकिल कुहुक मचाती है।
चातक पिऊ पिऊ-शोर करे, वन शोभा ललित सुहाती है॥
नाचत मयूर हर्षित होकर, जित देखो पाँख फुला करके।
मैना तोता मीठे स्वर से शुभ नाम लेत सुषमा करके॥
बीच-बीच में शिखर सुहाते, झरना निर्मल झरते हैं।
मृग-खग-शशक-केशरी-हाथी, एक ही साथ विचरते हैं॥

भरद्वाज! उस विपिन में, उपवन है सुख सार।
द्वादश उनके नाम शुभ, सुनिये परम उदार॥ ३२॥

श्री शृङ्गार विपिन मन भावन, वन विहार सुखकारी है।
वन तमाल अरु वन रसाल, चम्पक वन अति मन हारी है॥
चन्दन वन शीतलता कारक, पारिजात वन परम उदार।
दिव्य अशोक विपिन उत्तम है, वन विचित्र ललचावन हार॥

वन कदम्ब सुखमाकर है, अरु वन अनङ्ग शुभ परम ललाम।
विपिन नाग केशर कुसुमित है, ये हैं द्वादश वन के नाम॥
सघन विपिन में निविड अलौकिक, सुन्दरता बहु देता है।
नील मेघ की अंधियारी की, शोभा यह हर लेता है॥
सब उपवन में ललित लता के, कुञ्ज विचित्र बने सुन्दर।
विविध तरह के रङ्ग विरङ्गे, वृक्ष लगे सबके अन्दर॥

जड़ता का नहिं नाम है, चिन्मय सबके देह।
ज्ञानी हैं सब नित्य हैं, सरस राम के नेह॥ ३३॥

कमनीय काम सम सुन्दर सबही, बय किशोर नव सुखकारी।
नूतन सुमन नये पल्लव फल, कोमल चिक्कन मन हारी॥
हर प्रकार के सुमन फूल से, युक्त लता अरु वृक्ष घने।
ललित लता के ठौर-ठौर हैं, सुभग वितान ललाम तने॥
अप्रमेय अविनाशी चिन्मय, अमृत रस भरपूर महा।
झुकी डालियाँ फल भारों से, वसुधा तल तक खूब अहा॥
चिन्ता मणि अरु नील मणी से चम-चम करते पुष्प सभी।
स्वर्ण तेज सम पीत पुष्प भी, मुरझा जाते नहीं कभी॥
मधुकर ले-ले दिव्य गन्ध, गुञ्जार मचाते मन भावन।
शीतल मन्द सुगन्ध सुहावन, वहता वायू ललचावन॥

पीकर पुष्प सुगन्ध रस, मतवाले वन भृङ्ग।
गिरते भूमी पर उठत, वश हो प्रेम तरङ्ग॥ ३४॥

थोड़ी देर बैठ जाते हैं, एक सुमन पर होकर मौन।
फिर गन-गन करते उड़ जाते, करते दूजा सुमन भौन॥

भ्रमरी गण के साथ भ्रमर सब क्रीडा करते विविध प्रकार।
शुक शारिका कोकिला कल-कल, नाद मचाते हैं मनहार॥
पारावत कहिं बोल रहे हैं, कहिं कपोत गण करते शोर।
पिऊ-पिऊ शब्द करें पपीहा, शोभा देता अधिक चकोर॥
शशि मण्डल सम गोल मण्डल बन, हंस हंसिका करते खेल।
सारस क्रौञ्च हंस सभी खग, आपस में रखते हैं मेल॥
मिल-जुल कर करते क्रीडा हैं, सुख पाते लख कर श्रीराम।
श्री विदेह नृप राज दुलारी, सखी-सखा परिकर सुखधाम॥

पची अमृत स्वाद मय, करते फल उपभोग।
मोर मयूरी मुदित हो, नाचत केकी कोक॥ ३५॥

कलियाँ पुष्पन की शोभामय को भी आनन्द देती हैं।
धन्य-धन्य ये, सिय-सियवर के, भी मन को हर लेती हैं॥
ललित लवङ्ग लता लह लहती, कुन्द मालती जुही गुलाब।
जाती करण केतकी, चम्पा, वासन्ती-माधवी सुहाव॥
और विचित्र लता पुष्पों से, युक्त सुहाती उस बन में।
निर्झर शिखर सुहाते उसमें, जैसे हीरे कञ्चन में॥
वृच्छ लता के सुमन सुवासित, रखते विपिन प्रमोद महान।
शीतल मन्द सुगन्ध, पवन झकझोरा मारत मोद निधान॥
जहाँ-तहाँ पुष्प गिरे मनहारी, बिखरी पाँखड़ियाँ झड़ीं हुईं।
वह वसुधा की शोभा को अतुलित शोभा देती गड़ी हुईं॥

नील-पीत-अरुनार तथा, हरित-श्वेत पचरङ्ग।
पुष्प अधिक मन भावते, लगते युत शुभ भृङ्ग॥ ३६॥

स्फटिक-मणी सम निर्मल झरना, ठौर-ठौर पर झरते हैं।
तीर-तीर पर रसिक शिरोमणि, सियजू सहित विचरते हैं॥
भले घाट मणि मुक्ता विरचित, सुन्दर मनहर बने सोपान।
भाँति-भाँति के खिले कमल हैं, करते मधुकर मीठा गान॥
मणि मुक्ता मण्डित घाटों से, युक्त विशाल बने हैं ताल।
कुण्ड सरोवर मनहारी हैं, जलचर संकुल सब सुखशाल॥
छोटे-छोटे बने बंगला, बीच-बीच में परम ललाम।
बनो वेदिका सघन कुञ्ज में, जहाँ-तहाँ आनन्द महान्॥
वर्णन जैसा कर आये हैं, वैसे ही मणि रतन रचित।
बने बँगला और वेदि का हीरा पन्ना लाल खचित॥

षट् ऋतु रहती है वहाँ, सब दिन परम लुभाय।
सेवा कर प्रभु की सदा, हर्षित हो ललचाय॥ ३७॥

किसी ठिकाने ऋतु बसन्त अरु, कहीं ग्रीष्म वर्षा रहती।
कहीं शरद कहीं हेम लुभाई, शिशिर सुहावन भी रहती॥
देशी[1] देव[2] गिरो[3] सुखकारी, वैराडो[4] टोडो[5] मुद धाम।
ललित हिडोंली[6] ये छे सुन्दर हैं रागिणियों के हैं शुभनाम॥
मूर्ति मन्त वसती सब दिन है, वन प्रमोद में ललचा कर।
राग वसन्त-वसन्त ऋतु ढिग, रहता है सुख का सागर॥
भैरवी[1] गुर्जरी[2] रेवा[3] अरु गुणकरि[4], बंगाली[5] अति मनहार।
बहुली[6] ये रागिणियाँ, रहती उस वन में ललचाकर॥
सहित सहाय समाज सभी ये, प्रभु की सेवा करती हैं।
श्याम सुन्दर मनभावन के, मन को भी हर लेती हैं॥

मल्लारी[१] सोरठी[२] अरु, सावेरी[३] सुख धाम ।
गान्धारी[४] कौशिकी[५] शुभ, हरि सिङ्गार[६] अभिराम ॥ ३८ ॥
ये छे राग सोहावने, सहित रागिणी गान ।
करि सर्वेश्वर को सदा, देते मोद महान ॥ ३९ ॥
वर्षा ऋतु में राग मेघ भूपाली माल श्री और विभास ।
षट् मञ्जरी, बड़ हँसो, अरु कर्णाटी अतिशय सुखराश ॥
कामोदी, कल्याणी सुखमय, आभीरी लाटिका ललाम ।
सालगो नट हम्मोरी षट् राग शरद में दें अभिराम ॥
बृहन्नाट मालवी त्रिवेणी, गौरी केदारी मुद धाम ।
मधुमालिका पहाड़िका सुन्दर, लगते हिम ऋतु में सुखधाम ॥
सुनने में मीठे लगते ये, उर की ज्वाला हरते हैं ।
रोते हुये जीव को प्रमुदित, पल भर में ये करते हैं ॥
इन सबको गाने वाले खुद, मूर्ति मान ये रहते हैं ।
राग रागिणी सह समाज, प्रभु के गुण गण को कहते हैं ॥
समय-समय सियाराम की, सेवा करते नित्य ।
रूप माधुरी निरखि ये होते हैं कृत-कृत्य ॥ ४० ॥
यह प्रमोद कानन महा, वन उपवन सह प्रोत ।
छठें आवरण में रहत अवध धाम के नीत ॥ ४१ ॥
भरद्व ज ! इस विपिन में, प्रभु का नित्य विहार ।
होता प्रति दिन प्रेम सह, रास अनेक प्रकार ॥ ४२ ॥
पुण्य तोय मय सरिताओं की, मूल महानदि सरयू नाम ।
आवरण सातवें में वहती हैं, प्रभु की परम प्रिया अभिराम ॥

सकल लोक पावनी श्रीमती, नित्य शाश्वती राम प्रिया।
सच्चिद्धन आनन्द रूपिणी है दासी जिसकी सब नदियाँ॥
विरजा-गङ्गा यमुनादिक सब जिसकी अंश कला से हैं।
नाथ परम सुखधाम मनोहर, दशरथ राज लला से है॥
जिसका नाम स्मरण करते ही, पाप ताप भग जाते हैं।
मायाजाल कराल काल भी, नाम सुनत थर्राते हैं।
दरश-परश स्नान किये ते, रघुपति धाम सिधाते हैं॥
ब्रह्मा-शिव-सनकादिक जिसको, सादर शीश नवते हैं।।
ऊँची-ऊँची ललित लहरियाँ, जिसमें शुभ लहराती हैं।
जिसकी दिव्य प्रभा के सन्मुख, चन्द्र प्रभा लज जाती हैं॥

सुधा सहस सम स्वाद मय, शीतल जल सुखकार।
वहता है सब ताप हर, हेतु रहित हितकार॥ ४३॥

हरित, नील-अरुनार-पीत अरु, श्वेत सरोज खिले सुन्दर।
मधु पराग कर ग्रहण गूँजते, मीठे स्वर से हैं मधुकर॥
और विविध पुष्पों के प्यारे पेड़ लगे हैं तीर तीर।
चक्रवाक कोकिल मयूर, खग डोलत हंस चकोर कीर॥
पद्मराग-कौस्तुभ-मणि माणिक चन्द्रकान्त आदिक रुचिकर।
मुक्ता मोती रतन आदि सब, खचित स्वर्ण में सुखमा कर॥
इन सबकी बालू के रज कण, चम-चम चमका हैं करते।
अपनी तेज प्रभा से सबही प्रभा प्रभाकर की हरते॥
दिव्य अलौकिक शोभा मय, सब घाट बँधे हैं बड़े विशाल।
बुर्ज बने विच-बीच अनोखे, निरखत लागत परम रसाल॥

जल में उनका बिंब दिखाता, दूनी सुन्दरता, करता।
झिलमिल लहरों के वह बरबश सबके मन को है हरता॥

वर्णन सरयू सरित वर, का नहि कहि सक कोय।
इसके सम यह जगत में, यही कहें सब कोय॥ ४४॥
श्री-श्रीसरयू अवध को, वेष्टित किये सुहाय।
रामवल्लभा सुभग सुचि, महिमा अगम कहाय॥ ४५॥
यह सप्तम आवरण में, शोभा देत महान्।
तट पर विचरत मोद अति, पावन श्री भगवान॥ ४६॥
यह सातों आवरण का, वर्णन विशद उदार।
भरद्वाज मुनिश्रेष्ठ ! शुभ किया बुद्धि अनुसार॥ ४७॥

जो इसको सावधान हो पढ़ता या सुनता कोई मतिमान।
योगी-जपी-तपी-आदिक को दुर्लभ पाता है वह धाम॥
बसता श्री साकेत-धाम में, सियवर सङ्ग रहै दिन रैन।
बन जाता प्रभु का प्यारा वह, करता सुखसागर में ऐन॥
ज्ञान-ध्यान-से दान-यज्ञ से, ब्रत, पूजा तीर्थाटन से।
फल मिलता नहि वह फल मिलता, इसके सुन्दर सुमिरन से॥
इसको जो कोई सुन लेता, उससे डरता है कलिकाल।
पढ़ता सुनता आनन्द पाता, उसके, होते हैं ललि लाल॥

सुन कर मीठे वचन ये, भरद्वाज कर जोर।
ऋषि वसिष्ठ सों प्रेम सह बोले चरण निहोर॥ ४८॥

हे वशिष्ठ ! तव वदन चन्द्र से झरणा सुन्दर झरता है।
उस अमृत का पान हमारा, हृदय सुशीतल करता है॥

पीकर भगवत् लीला मृत मैं धन्य धन्य हो गया आज।
हुआ प्रफुल्लित उर सरोज शुभ मुनिवर! मेरा तो यह आज ॥
किङ्कर हूँ सेवक हूँ स्वामो! तव चरणों का दास सदा।
भूल नहों सकता शुभ गाथा, भरद्वाज अब इसे कदा ॥
मैं ऋणी आपका सब दिन हूँ, इस धन के दाता आपही हैं।
भगवान् राम के दिव्य धाम के, सुन्दर गाता आपही हैं ॥

यों कह कर दोनों ऋषी, निज-निज आश्रम जाय।
प्रभु के सुन्दर रूपको, निज निज मन में ध्याय ॥ ४८ ॥
राम धाम की अमित प्रभा महिमा ललित विशाल।
सुमिरत-सुमिरत हो गये, प्रेम मगन तत्काल ॥ ४९ ॥
भरद्वाज मुनिवर तथा, श्री वशिष्ठ सम्वाद।
प्रेमनिधी ने है किया, इसका यह अनुवाद ॥ ५० ॥